International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2022; 8(4): 20-23
© 2022 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 06-03-2022
Accepted: 10-05-2022

डॉ. संगीता कुमारी
असिस्टेंट प्रोफेसर, संस्कृत एवं वेदाध्ययन विभाग, देवसंस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार, उत्तराखंड, भारत

Corresponding Author:
डॉ. संगीता कुमारी
असिस्टेंट प्रोफेसर, संस्कृत एवं वेदाध्ययन विभाग, देवसंस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार, उत्तराखंड, भारत

संस्कृत भाषा एवं वर्त्तमान विश्व

डॉ. संगीता कुमारी

प्रस्तावना

संस्कृत भाषा एवं वर्त्तमान विश्व मे समाधान एवं समस्या का संबंध है। दूसरे शब्दों में, वर्त्तमान समस्याग्रस्त विश्व की समस्यायों का समाधान संस्कृत भाषा में ही निहित है। वस्तुतः विश्वकल्याण की कामना से ही तो वैदिक संस्कृति अनुप्राणित है-

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाभवेत्॥

संसार की समस्त परिष्कृत भाषाओं में प्राचीनतम भाषा है-संस्कृत। संस्कृत शब्द 'सम्' पूर्वक कृ धातु से निष्पन्न है, जिसका मैलिक अर्थ है- संस्कार की गई भाषा। दूसरे शब्दों में, परिष्कृत, परिशुद्ध तथा व्याकरणादि दोषों से रहित भाषा ही संस्कृत भाषा है। भाषा-विज्ञान की दृष्टि में संसार की भाषाओं में दो ही भाषाएँ ऐसी हैं, जिनके बोलने वालों ने संस्कृति तथा सभ्यता का निर्माण किया है। इनमें एक हैं- आर्यभाषा और दूसरी है सामी या सेमेटिक भाषा। आर्यभाषाओं में संस्कृत ही प्राचीनतम है।

आज पूरे विश्व की संस्कृति अपसंस्कृति में बदल रही है और मानवता अपने लक्ष्य से दूर हटती जा रही है। आज विश्व के क्षितिज पर सांस्कृतिक संकट के जो बादल मंडरा रहे हैं उनका मूल कारण यह है कि संस्कृति जिन मानवीय मूल्यों एवं आदर्शों का प्रतीक है उनके प्रति मानव-मानस में अनिश्चय एवं भ्रान्ति है। नैतिकता और आध्यात्मिकता की जिस ऊँचाई पर संस्कृति अवस्थित है वहाँ तक हमारी पहुँच नहीं हो रही है। आत्मिक खोज के अभाव में समस्त मानव-जाति एक अप्रत्याशित भय, कुंठा एवं त्रास से ग्रसित है।

सर्वत्र शान्ति, सुख-चैन का अभाव है। व्यक्ति से लेकर राष्ट्र तक सब अपनी अस्मिता की सुरक्षा में लगे हुए हैं।

आज की संस्कृति उपभोक्तावादी संस्कृति उपभोक्तावादी संस्कृति हो गई है। यह सत्य है कि मानव-जीवन के समुचित विकास के लिए धन की आवश्यकता है, परंतु धन को साध्य मान लेना सांस्कृतिक विकृति है। संस्कृत साहित्य में विषय-भोग की कामना को जीवन के लिए सर्वतोभावेन अनर्थकारी माना गया है-

"भोगाः न भुक्ताः वयमेव भुक्ताः, तपो न तप्तम् वयमेव तप्ताः। कालो न यातो वयमेव याताः, तृष्णा न जीर्णा वयमेव जीर्णाः।

सांस्कृतिक संकट का एक विशेष कारण आज की शिक्षा-प्रणाली और स्वरूप है। नैतिकता, धर्म या अध्यात्म की शिक्षा मिटती जा रही है। जहाँ हमारा लक्ष्य 'या विद्या सा विमुक्तये' था, वहाँ अर्थकारी विद्या की प्रधानता हो गई है। संस्कृत साहित्य में परा और अपरा दोनों विद्याओं का समन्वय दर्शाया गया है। अतः संस्कृत साहित्य का अध्ययन-अध्यापन आवश्यक है। प्रो० देवराज के शब्दों में, हमारी शताब्दी को मानवीय बुद्धि में एकदम आस्था नहीं है और वह यह मानकर चल रही है कि मनुष्य कभी भी उन मूल्यों के स्वरूप से परिचित नहीं हो सकता जिसके लिए उसे जीना चाहिए।"

साहित्य की दृष्टि से संस्कृत भाषा का विपुल भंडार है एवं संस्कृत साहित्य में हमारे देश भारतवर्ष की संस्कृति, सभ्यता तथा आत्मा निवास करती है। राष्ट्रीय संस्कृति के रूप में भारतीय संस्कृति आज सबसे पुरानी संस्कृति है। ग्रीस की प्राचीन संस्कृति जिसका आदर्श कला थी, आज लुप्त हो गई है। इसी तरह रोम की राजनीतिपरक संस्कृति भी आज नहीं है। भारतीय संस्कृति की अक्षुण्णता के कुछ ऐसे कारक हैं जो शाश्वत और सर्वव्यापी हैं, जिनमें संस्कृत भाषा ही आधारभूत है। भारतीय संस्कृति की विशेषता है- सत्य, अहिंसा, त्याग, दया, परोपकार आदि एवं इन सभी का दर्शन संस्कृत साहित्य में सांगोपाग होता है और इसी में विश्व का कल्याण भी निहित है। पाश्चात्य विचारक विन्टरनिट्ज ने उचित ही कहा है," लिटरेचर (साहित्य) अपने व्यापक अर्थ में जो कुछ भी सूचित कर सकता है वह संस्कृत में वर्त्तमान है। धार्मिक और इतिहासपरक (सेक्यूलर) रचनाएँ, महाकाव्य, लिरिक, नाटकीय और नीति सम्बन्धी कविता, वर्णनात्मक, अलंकृत और वैज्ञानिक गद्य-सब कुछ इस में भरा पड़ा है।"

'परोपकराय सतां विभूतयः' मन्त्र की उद्घोषणा करने वाली भारतीय संस्कृति का महान् उपदेश है कि दूसरों की भलाई अपने प्राण त्याग कर भी करनी चाहिए। भारतवर्ष में तो व्यक्तियों को ही नहीं प्रकृति को भी परोपकारपरायण माना गया है-

"भवन्ति नम्रास्तरवः फलागमै-
र्नवाम्बुभिर्दूरविलम्बिनो घनाः।
अनुद्धताः सत्पुरूषाः समृद्धिभिः
स्वभाव एवैष परोपकारिणाम्॥"
(अभिज्ञानशाकुन्तलम्, 5/12)

संस्कृत साहित्य त्याग भावना से ओत-प्रोत है अर्थात् इसका उपदेश है कि इस संसार में सब कुछ ईश्वरमय है; ईश्वर से नियन्त्रित है, अतः प्राप्त का त्यागपूर्वक उपभोग करना चाहिए और किसी के धन की लिप्सा नहीं करनी चाहिए-

"ईशावास्यमिदं सर्वं यत् किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीयाः, मा गृधः कस्यविद् धनम्॥" (ईशावास्योपनिषद्)

राजा हरिश्चन्द्र, राजा शिवि, दधीचि और अङ्गराज कर्ण के त्यागयुक्त वृतान्त आज भी भारतीयों को प्रभावित करते हैं।

भारतीय संस्कृति में धर्मशास्त्रोक्त वचनों के अनुसार सदाचार पालन अनिवार्य है। उपनिषद् वाक्य- 'सत्यं वद, धर्मं चर' आदि सदाचार पालन का ही उपदेश

देते हैं। साथ ही, भारतीय संस्कृति व्यक्ति को जननी और जन्मभूमि की सेवा करने के लिए प्रेरित करती है- "जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी"।

संस्कृत साहित्य में यम-नियमों के पालन एवं यज्ञों के प्रति आदरभाव प्रदर्शित करने की भी बात कही गई है। व्यक्तिगत लाभ की चिन्ता न करते हुए लोककल्याण कामना से किए गए सारे कार्य यज्ञ हैं। श्रीकृष्ण ने तो परमात्मा को भी यज्ञ में ही स्थित माना है-

"कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि ब्रह्माक्षरसमुदभवम्।
तस्मात्सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम्॥"
(श्रीमद्भगवद्गीता, 3/15)

संस्कृत साहित्य में पुरूषार्थ-चतुष्टय (धर्म,अर्थ,काम तथा मोक्ष) की सिद्धि भी व्यक्ति की लौकिक तथा पारलौकिक उन्नति के लिए परमावश्यक बताई गई है। महर्षि वेदव्यास ने घोषणा की है-

"ऊर्ध्वबाहुर्विरौम्येष न च कश्चिच्छृणोति मे।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे-युगे॥
(श्रीमद्भगवद्गीता, 4/7,8)

भारतीय संस्कृति में वर्णाश्रम-व्यवस्था का भी अत्यधिक महत्त्व है। श्रीकृष्ण ने अर्जुन के समक्ष स्वयं को ही वर्णव्यवस्था का स्रष्टा बताकर इसके महत्त्व का उद्घोष किया है-

"चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः।
तस्य कर्त्तारमपि मां विद्धयकर्तारमव्ययम्॥" (गीता, 4/14)

संस्कृत साहित्य में व्यक्ति के मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य की दृष्टि से षोडश संस्कारों की प्रशंसनीय कल्पना की गई है और पूज्य व्यक्तियों एवं महापुरूषों के प्रति आदरभाव रखने की प्रेरणा दी गई है। 'आचार्य देवो भव', 'मातृदेवो भव', 'पितृदेवो भव' और "अतिथिदेवो भव' आदि उपनिषद्- वाक्य ऐसे ही प्रेरणा देते हैं।

भारतीय चिन्तकों ने विविधता में एकता अर्थात् समन्वय भावना का प्रतिपादन किया। इतना ही नहीं आगे चलकर तो भारतीय संस्कृति ने विदेशी धर्म-दर्शन को भी आत्मसात् किया और परिणामस्वरूप महात्मा गांधी का प्रिय भजन हो गया-

"रघुपति राघव राजा राम। पतितपावन सीताराम।
ईश्वर अल्लाह तेरो नाम। सबको सन्मति दे भगवान्॥"

भारतीय संस्कृति मानव से दूसरे मानव तथा मनुष्येत्तर प्राणियों के लिए दयाभाव या अहिंसा की शिक्षा देती है। भगवान् बुद्ध की करूणा और भगवान् महावीर का नियम पालन अहिंसा का ही उत्कृष्ट रूप है। महात्मा गाँधी ने तो अहिंसाव्रत से ही हिंसक ब्रिटिश सरकार को भारत छोड़ने पर विवश कर दिया। संस्कृत साहित्य का उद्घोष है- "अहिंसा परमो धर्मः"।

वैदिक संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृति है। वेदों में ज्ञान-विज्ञान की अमूल्य निधि है। विन्टरनिज महोदय ने वैदिक संस्कृति का महत्त्व स्वीकार करते कहा है-

"If we wish to learn the beginnings of our own culture, if we wish to understand the Indo-European culture. We must go to India. Where the oldest literature of an Indo-European people is preserved."

भारतीय धर्म-दर्शन के मनीषी मैक्समूलर संस्कृत साहित्य एवं भारतीय संस्कृति की उत्तमता के संबंध में लिखा है, " अगर मैं अपने आप से यह पूछूं कि केवल यूनानी, यहूदी और रोमन भावनाओं एवं विचारों पर पलनेवाले हम यूरोपीय लोगों के आन्तरिक जीवन को अधिक समृद्ध, अधिक पूर्ण और अधिक विश्वजीन, संक्षेप में, अधिक मानवीय बनाने का कोई नुस्खा हमें किस जाति के साहित्य

में मिलेगा, तो बिना किसी हिचकिचाहट के मेरी उँगली हिन्दुस्तान की ओर उठ जाएगी।

इस प्रकार, वर्त्तमान विश्व की समस्या आज यदि प्रश्न है, तो संस्कृत भाषा उसका उत्तर है। डॉ० बाबूराम सक्सेना ने लिखा है, संस्कृत भाषा में मानव के भावों और विचारों को व्यक्त करने की श्रेष्ठ सामार्थ्य है। सर्वव्यापक विभु ब्रह्म से लेकर परमाणु तक का विवरण देने की इस भाषा में शक्ति है और इस शक्ति को उत्तराधिकार स्वरूप पाकर पालि और प्राकृत भाषाओं का विकास हुआ है। सिंहल, ब्रह्मदेश (वर्मा, थाईदेश, यवद्वीप, सुमात्रा, बालि आदि) में जिन्हें हम विनयपूर्वक बृहत्तर भारत कह सकते हैं, संस्कृत भाषा और साहित्य का जो श्रेयस्कर प्रभाव पड़ा है, उसे आज भी हम स्पष्ट रूप से देख सकते हैं। वस्तुतः संस्कृत भाषा के संबंध में ठीक ही कहा गया है-

संस्कृते संस्कृतिज्ञया संस्कृते सकलाः कलाः।
संस्कृते सकलं ज्ञानं संस्कृते किन्न वर्तते॥

संदर्भ

1. श्री अरविंद (1994), भारतीय संस्कृति के आधार, श्रीअरविंद आश्रम, पांडिचेरी
2. उपाध्याय आचार्य बलदेव (2001), संस्कृत साहित्य का इतिहास, शारदा निकेतन, वाराणसी
3. कीथ डॉ० ए० बी० (अनुवादक- डॉ० मंगलदेव शास्त्री), संस्कृत साहित्य का इतिहास
4. सिंह 'दिनकर' रामधारी (2000), संस्कृति के चार अध्याय, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद
5. कुमार डॉ० शशिप्रभा (2005), भारतीय संस्कृति के विविध आयाम, विद्यानिधि प्रकाशन, दिल्ली
6. उपाध्याय आचार्य बलदेव (2006), वैदिक साहित्य और संस्कृति, शारदा निकेतन, वाराणसी
7. झा एवं श्रीमाली (1984), प्राचीन भारत का इतिहास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
8. मिश्र डॉ० जयशंकर (2006), प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना
9. वाल्मीकीय रामायण, महाभारत, गीता आदि; चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी
10. सेन अमर्त्य, द आर्गुमेन्टेटिव इंडियन, 2005
11. वर्मा पवन कुमार, भारतीयता की ओर, पेंग्विन बुक्स, यात्रा बुक्स